International Journal of Multidisciplinary Research and Development
Online ISSN: 2349-4182 Print ISSN: 2349-5979
www.allsubjectjournal.com
Volume 3; Issue 1; January 2016; Page No. 426-428

काव्य-संग्रह 'अभी शेष है इन्द्रधनुष' का शैल्पिक सौष्ठव

नीलम

रिसर्च विद्वान, लवली प्रोफेशनल युनिवर्सिटी, फागवारा, पंजाब, भारत।

प्रस्तावना

कविता कथ्य और शिल्प का समन्वित रूप होती है। कवि अपनी अनुभूति को भाषा के माध्यम से अभिव्यक्ति प्रदान करता है। भाषा सम्वेदनाओं को साकार रूप देती है। शब्दों का उपयुक्त चयन समुचित पद-विधान कविता को सम्प्रेषणीय और प्रभावोत्पादक बनाता है। अनुभूति की सच्चाई के साथ एक सशक्त शिल्प का विधान का होना भी कवि कर्म के लिए बहुत आवश्यक है। डॉ. उदयभानु हंस लिखते हैं कि- 'श्रेष्ठ कविता के लिए अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों का सशक्त होना परमावश्यक है।' यदि सघन अनुभूति कविता का प्राण है, तो उसकी अभिव्यक्ति के लिए उत्तम शब्द चयन, अंलकार, बिम्ब, प्रतीक, को 'उत्तम शब्दों का उत्तम विधान'है। डॉ मनोज छाबड़ा 'अभी शेष हैं इन्द्रधनुष ' का अनुभूति पक्ष अत्यंत सुदृढ़ है तो कला पक्ष भी सशक्त है।'

शिल्प के अन्तर्गत कवि के शब्द भण्डार, उसकी भाषा की विशेषताओं, बिम्ब विधान, प्रतीक योजना, अंलकार सौन्दर्य, काव्य रूप और छन्दों आदि का विवेचन-विश्लेषण किया जा रहा है। ये सभी तत्त्व कविता के निर्माण में सहायक हैं। प्रस्तुत अध्याय में आलोच्य कविताओं के शैल्पिक तत्त्वों का विवेचन विश्लेषण करना ही हमारा मन्तव्य है।

वस्तुतः काव्य-भाषा के प्रयोग में ही कवि के कौशल की परीक्षा होती है। शम्भुनाथ सिंह काव्य के उत्कर्ष के लिए शब्द शिला की सजीवता को अनिवार्य मानते हैं । भाषा का व्यवहार यों तो सभी करते हैं, पर सच्चा कवि उसे अपनी यशवर्तिनी बना कर रखता है । वह शब्द-शिल्प और भाषा की प्रकृति से पूर्ण परिचित होता है । भाषा की प्रकृति से परिचित होने के कारण वह काव्य-भाषा में आकर्षण और सौन्दर्य उत्पन्न करके उसे उत्कृष्ट बनाता है।' कवि डॉ मनोज छाबड़ा ने इन्हीं विचारों की अनुपालना करते हुए भाषा-प्रयोग किया है । एक उदाहरण देखिए-

'देख समंदर
ताल में मैं
ओक में भर पी गया हूँ
रंगों, शब्दों, मौन, नाद में
कितना जीवन जी गया हूँ
फिर काहे को
दौलत-बंगला
गाड़ी सपनों में आएँ[1]

आलोच्य कवि की काव्य-भाषा में आकर्षण, सौन्दर्यमयता, सबलता एवं स्पष्टता विद्यमान है। कवि की शब्दावली में भावों की अनुगामिनी है।

कवि ने 'भाषा बहता-नीर' की उक्ति को चरितार्थ किया है। समय प्रवाह के साथ-साथ उसमें अन्य भाषाओं के शब्द सम्मिलित होते चलते हैं और स्वयं के शब्दों का रूप भी बदलता चलता है। जो भी परिवर्तन होता है वह शब्द के स्तर पर ही होता है क्योंकि शब्द ही भाषा की सार्थक इकाई है। शब्द उस ध्वनि समूह हो कहा जाता है जिसमें भाव बोधक अथवा अर्थवहन करने की क्षमता होती है। भारतीय मनीषियों ने 'शब्द को ब्रह्म की तरह अनन्त, अक्षर, असीम एवं अजन्मा माना है। अतः जिस प्रकार ब्रह्म को 'अनेक रूप रूपाय' कहकर विविध रूपों वाला माना जाता है, उसी प्रकार शब्द के भी अनेक रूप स्वीकार किए जाते हैं। जैसे- तत्सम्, तद्भव, देशज, विदेशी और संकर अथवा द्विज। तत्सम् शब्द मूल भाषा के वे शब्द होते हैं जो अपने शुद्ध रूप में परिवर्ती भाषा में आते हैं। उपरोक्त आधार पर ही आलोच्य कृति का विवेचन विश्लेषण किया गया है। भाषा का एक उदाहरण देखिए-

'सूखे पेड़ों पर
लिपटी हैं
पराजित हो चुकी सनदें
नीचे बिखरे हैं कितने
नौकरी के इश्तिहार,
इण्टरव्यू के नाम पर
रात से कल
चढ़ा बुखार,
रिश्वत में जाएँ हम
पैसे बने के खनकें।[2]

विचारों की अभिव्यक्ति के लिए भाषा ही प्रमुख होती है। भाषा यदि जन साधारण की होती है तो वह समाज में और व्यक्ति पर अपनी गहरी छाप छोड़ती है। भाषा बोली के निकट ही होती है। भाषा और बोली में विशेष अन्तर न होकर अन्तर केवल इतना है कि भाषा का क्षेत्र अधिक विस्तृत और बोली का क्षेत्र सीमित होता है । भाषा के अन्तर्गत कई बोलियाँ समाहित होती है, किन्तु प्रकृति की दृष्टि से भाषा और बोली में अन्तर करना कठिन है फिर भी विद्वानों ने इसमें अन्तर करने का प्रयास किया है । आलोच्य कवि डॉ मनोज छाबड़ा की भाषा में सहजता और सरलता है-

'मेरी पहली कविता की गर्दन
मेरे पिता ने
अपने घुटनों के नीचे
दबा दी
और
सिर के बाल उखाड़कर
एक कसाई को थमा दिए।[3]

डॉ मनोज छाबड़ा ने काव्य की शोभा बढ़ाने के लिए विभिन्न बिम्बों का आश्रय लिया है। दृश्य, श्रव्य, घ्राण, नाद, आस्वाद्य

आदि बिम्ब इनके काव्य को चमत्कारिक बनाने में सक्षम हैं। बिम्ब के इन तत्त्वों से स्पष्ट है कि जिस प्रकार चित्र में बिम्ब होता है, उसी प्रकार बिम्ब में भी उसका ऐसा प्रतिबिम्ब होता है, जो पाठक के मन में उस वस्तु की अनुभूति जगा सके। कवि ने काव्य में बिम्ब चित्र की भान्ति रेखाओं में नहीं, अपितु शब्दों के माध्यम से प्रस्तुत किया है। वह चित्र केवल स्थूल वस्तु का ही प्रतिबिम्ब न हो, अपितु उसका सम्बन्ध ऐन्द्रियबोध से भी होना चाहिए अर्थात् उसमें हमारी इन्द्रियों को गुद-गुदा देने की क्षमता होनी चाहिए। जैसे-

'तुम्हें छूकर
मैनें अपनी रूह को छुआ
तुम्हें चूमा जब-जब
अपने अंतर को थिरकाया
तुम्हारी पारदर्षी आँखों से
झरते रहते हैं वे सारे मौसम
जिनमें मेरे व्यक्तित्व की
सभी खरोंचें छिप जाती हैं।[४]

काव्य-बिम्ब में प्रभावोत्पादन की क्षमता का होना अनिवार्य है और उसमें आरोपण का अभाव होना चाहिए। इसीलिए कवि डॉ मनोज छाबड़ा ने बिम्ब का वह अंलकारों की भान्ति मूल वस्तु पर ऊपर से या बाहर से आरोपित नहीं दिया। बिम्ब का वस्तु से सीधा सम्बन्ध होना चाहिए, अन्यथा बिम्ब और अंलकार में कोई अन्तर नहीं रह जाएगा। इन्हीं तथ्यों पर केन्द्रित बिम्ब विधान का उदाहरण देखिए-

'तुम्हें तेज हवाओं का डर नहीं
इसलिए दीया भी नहीं है तुम्हारे पास
और इन तेज़ हवाओं से
बिजली के तार टूट जाते हैं जब कभी
तब जलते हो तुम ईर्श्या से
और तरसते हो मुट्ठी भर रोषनी के लिए,
इसके बावजूद
नहीं खरीदते हो एक दीया।[५]

हिन्दी कविता में प्रतीकों के प्रयोग की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। प्रतीक में ऐसी शक्ति होती है कि वह अप्रस्तुत के माध्यम से सम्पूर्ण सन्दर्भ को ही अभिव्यक्त कर देता है। मानव जब अधिक भावुक या विचारक होता है, तब वह अपनी अभिव्यंजना के लिए प्रतीकों का आश्रय लेता है।
'प्रतीक' शब्द का सामान्य अर्थ 'संकेत' या 'चिह्न' है। आधुनिक हिन्दी साहित्य में प्रतीक शब्द को जिस रूप में ग्रहण किया गया है, उसका सम्बन्ध अंग्रेजी के सिम्बल से है जो कि चिह्न या संकेत का द्योतक है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इन दोनों शब्दों का एक साथ प्रयोग किया है। ऐसे अप्रस्तुत अधिकतर उपलक्षण के रूप या प्रतीकत्व या ैलउइवसपब होते हैं। प्रतीक चयन में कवि डॉ मनोज छाबड़ा ने'अभी शेष हैं इन्द्रधनुष'में कुशलता दिखाई है-

'उसके चेहरे पर
मुस्कराहट का महासागर था
उसकी
नमकीन हँसी में
शंखों से लदी नावें थीं
वहाँ मछुआरे नहीं थे
इसलिए
वह स्वतंत्र मीन-सी
फिसल-फिसल जाती थी
मेरे जीवन से।[६]

'हिन्दी शब्द सागर में इस शब्द का प्रयोग चिह्न, प्रतिरूप, प्रतिमा, संकेत आदि के अर्थ मं किया गया है।' डॉ. धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार प्रतीक शब्द का प्रयोग उस दृश्य (अथवा गोचर) वस्तु के लिए किया जाता है, जो किसी अदृश्य (अगोचर या अप्रस्तुत) विषय का प्रतिविधिन उसके साथ अपने साहचर्य के कारण करती है, अथवा 'किसी अन्य स्तर की समानुरूप वस्तु द्वारा किसी अन्य स्तर के विषय का प्रतिनिधित्व करने वाली वस्तु प्रतीक है।' आलोच्य कृति का उदाहरण देखिए-

'द्वन्द्वों और तनावों की रात में
एक कुकुरमुत्ता
दिलाता है विश्वास
दिन आएगा
उसके लहजे से लगा -
दिन उत्सव है।
दिन उत्सव है
तभी तो उल्लसीत है कुकुरमुत्ता।[७]

आलोच्य काव्य-संग्रह में अलंकारों का सहज एवं स्वाभाविक प्रयोग कवि ने किया है । काव्य में अलंकार की अपेक्षा नहीं होनी चाहिए, पंत जी ने इस कथन में कुछ सार हो सकता है, पर आचार्य जयदेव के इस कथन- 'काव्य को अलंकार रहित मानने वाला, अग्नि को उष्णता विहीन क्यों नहीं मान लेता।' न केवल भामह, वामन और रीतिकालीन आलंकरिक आचार्य ही काव्य में अलंकार के एकान्त महत्त्व को प्रतिपादित करते हैं, अपितु अनेक पाश्चात्य समीक्षक और हिन्दी के आधुनिक कई आलोचक भी, अलंकार की काव्य में अनिवार्यता और उसके महत्त्व को स्वीकार करते हैं । आलोच्य कवि डॉ मनोज छाबड़ा ने अलंकारों का सहज और स्वाभाविक प्रयोग किया है । उपमान, रूपक, उत्प्रेक्षा, विभावना, व्यतिरेक, वीप्सा, मानवीकरण आदि अलंकारों का सहज प्रयोग इन्होंने किया है । अलंकार प्रयोग का एक उदाहरण देखिए-

'रेगिस्तान में खिले गुलाब के फूल
अप्रासंगिक नहीं है अब
नहीं है अप्रासंगिक
रेगिस्तान में उड़ता बादल
छोटा पोखर, बहती नहर।
गुलाब का फूल
बादल, पोखर-नहर
ये सब निकले हैं।[८]

आचार्य शुक्ल के शब्दों में, वस्तु या व्यापार की भावना चटकीली करने और भाव को अधिक उत्कर्ष पर पहुंचाने के लिए कभी किसी वस्तु का आकार या गुण बहुत बढ़ाकर दिखाना पड़ता है, कभी उसके रंग-रूप या गुण की भावना को, उसी प्रकार के और रूप रंग मिलाकर तीव्र करने के लिए समान रूप और धर्म वाली और वस्तुओं को सामने लाकर रखना पड़ता है । कभी-कभी बात को घुमा-फिराकर कहना पड़ता है । इस तरह

के भिन्न-भिन्न विधान और कथन के ढंग अलंकार कहलाते हैं। इनके सहारे से कविता का प्रभाव बढ़ाते हुए लिखा है-

'हम आदमी के खोने का
नहीं करते अफसोस अब
और शब्दों के खोने का अफसोस करने हेतु
शब्द भी कहाँ है अपने पास।
वे शब्द तो खो दिए हैं हमने
दामों के उतार-चढ़ाव की चिंता में।[८]

आचार्य नगेन्द्र ने इस प्रसंग में लिखा है, ... सत्य तो यह है कि अलंकार केवल रस के उपकारक ही नहीं, वे रस को अभिव्यक्ति के अनिवार्य माध्यम है। काव्य की भाषा..... व्यापक अर्थ में अलंकृत हो सकती है..... 'कोई भी कृति कवि चमत्कार-विहीन शब्दार्थ के माध्यम से रमणीय अर्थ या भाव का प्रतिपादन नहीं कर सकता और न कोई आलोचक ही इसे सिद्ध कर सकता है।' इस प्रकार स्पष्ट है कि काव्य-शिल्प में अलंकार का अत्यधिक महत्त्व है। अतः इसे हम उसका अनिवार्य उपादान मान सकते है। जैसे-

'इन पदचापों में
कि जिसमें सुनते हो
ध्वनियाँ
हड्डियों के चटखने की....
आती है गंध तुम्हें इन आहटों से
रक्त की
तब ढँक लो तुम अपना चेहरा
फूल कढ़े रूमाल से। [१०]

किसी भी कविता के काव्य शिल्प का मूल्यांकन करते समय हमें अलंकार तत्त्व पर भी विचार करना होगा। डॉ मनोज छाबड़ा के काव्य 'अभी शेष हैं इन्द्रधनुष ' में अलंकारों का सहज प्रयोग हुआ है।

निष्कर्ष

'शिल्प' विचारों का परिधान है। यह एक ओर लेखक का मानस चित्र है तो दूसरी ओर इसे लेखक के मन की बाह्य आकृति भी कहा जाता है। इसके अन्तर्गत कवि की अभिव्यक्ति और अभिव्यंजना के विभिन्न उपादान समाहित होते हैं। मनोज छाबड़ा की भाषा खड़ी बोली हिन्दी है। इसके शब्द भण्डार में- तत्सम्, तद्भव, देशी-विदेशी शब्दों का समावेश हुआ है। देशज शब्दों में पंजाबी, हरियाणवीं, बंगला, गुजराती आदि शब्द प्रयुक्त हुए हैं तो विदेशी शब्दों में उर्दू, फारसी और अंग्रेजी के शब्दों का सफल प्रयोग हुआ है।

संदर्भ

१ मनोज छाबड़ा'अभी शेष है इंद्रधनुष'पृ० ६८।
२ मनोज छाबड़ा'अभी शेष है इंद्रधनुष'पृ० ६६।
३ मनोज छाबड़ा'अभी शेष है इंद्रधनुष' पृ० ६८।
४ मनोज छाबड़ा'अभी शेष है इंद्रधनुष'पृ० १६।
५ मनोज छाबड़ा'अभी शेष है इंद्रधनुष' : पृ० १०६।
६ मनोज छाबड़ा'अभी शेष है इंद्रधनुष' पृ० २४।
७ मनोज छाबड़ा'अभी शेष है इंद्रधनुष'पृ० ६४।
८ मनोज छाबड़ा'अभी शेष है इंद्रधनुष'पृ० ६०।
६ मनोज छाबड़ा'अभी शेष है इंद्रधनुष'पृ०६६।
१० मनोज छाबडा : अभी षेश है इन्द्रधनुश : पृ० ७५।